

मध्य भारती

मानविकी एवं समाजविज्ञान की द्विभाषी शोध-पत्रिका

ISSN 0974-0066

(अंक-73, जुलाई-दिसम्बर, 2017)

संरक्षक

प्रो. राघवेन्द्र पी. तिवारी
कुलपति

प्रधान सम्पादक

प्रो. अम्बिकादत्त शर्मा

सम्पादक

प्रो. निवेदिता मैत्रा
डॉ. पंकज चतुर्वेदी
डॉ. आशुतोष कुमार मिश्र

प्रबन्ध सम्पादक

डॉ. छबिल कुमार मेहेर



डॉक्टर हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय

सागर (मध्यप्रदेश) - 470003

दूरभाष : (07582) 264455

ई-मेल : madhyabharti.2016@gmail.com

सम्पादकीय परामर्श मण्डल

- प्रो. वीरेन्द्र मोहन, हिन्दी विभाग
- प्रो. ए.एन. शर्मा, मानवशास्त्र विभाग
- प्रो. पी.पी. सिंह, विधि विभाग
- प्रो. ब्रजेश कुमार श्रीवास्तव, इतिहास विभाग
- डॉ. अनुपमा कौशिक, राजनीतिशास्त्र विभाग

मध्य भारती

मानविकी एवं समाजविज्ञान की द्विभाषी शोध-पत्रिका

अंक-73, जुलाई-दिसम्बर, 2017

ISSN 0974-0066 (पूर्व-समीक्षित अर्द्धवार्षिक शोध-पत्रिका)

डॉक्टर हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)

यू.जी.सी. द्वारा मान्य पत्रिकाओं की सूची (प.सं.-48918) में सम्मिलित।

प्रकाशित रचनाओं के अभिमत से डॉक्टर हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर
या सम्पादकों की सहमति अनिवार्य नहीं है।

सम्पादकीय पत्र व्यवहार :

मध्य भारती

डॉक्टर हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय

सागर - 470003 (म.प्र.)

दूरभाष : (07582) 264455

ई-मेल : madhyabharti.2016@gmail.com

आवरण : डॉ. छबिल कुमार मेहेर

मुद्रण :

अमन प्रकाशन

कटरा नमक मंडी, सागर (म.प्र.)

सदस्यता शुल्क	प्रति अंक	आजीवन
	रु. 150/-	रु. 2000/-
व्यक्तिगत	रु. 200/-	रु. 4000/-
संस्थागत		

अनुक्रमणिका

गाँधी और उत्तर-गाँधी सर्वोदयी-विमर्श आभा नवनी	5
शिशुपालवध में चित्रित प्रकृति-चित्रण पी. डी. सिंह	27
काव्य के निकष पर उत्तर राम आशुतोष	49
भारतीय महिलाओं के राजनैतिक सशक्तीकरण में नेहरू की भूमिका अनुपमा कौशिक	58
नव-उदारवादी समाज, मीडिया और स्त्री आकांक्षा	70
संगीत चिकित्सा एवं तंत्रिकातंत्र विज्ञान अवधेश प्रताप सिंह तोमर	75
ह्वाइटहेड का प्रक्रिया दर्शन सुचेता शुक्ला	83
विट्रोगेन्स्टाइन के भाषा-खेल और धुरी निश्चितता का नीतिशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य मंजेश कुमार	92
जैन दर्शन में आत्मा और उसका ज्ञातृत्व सचिन्द्र जैन	97
‘तिलहरी’ एक नवीन प्रागैतिहासिक पुरास्थल सुल्तान सलाहुद्दीन	110
पूर्व मध्यकालीन भारत की चंदेलवंशीय अर्थव्यवस्था आर. पी. सिंह एवं विशाल विक्रम सिंह	122
समकालीन युवाओं में फैशन और व्यक्तित्व विकास अनिता सिंह	131
साम्प्रदायिकता का बदलता स्वरूप और समकालीन कहानी सुशील कुमार गर्ग	137
बेहतर प्रबंधन से बदलेगी कृषि की तस्वीर केशव टेकाम एवं तुलसीराम दहायत	144

काव्य के निकष पर उत्तर राम

आशुतोष

राम का जीवन दो विरोधी नियतियों के संतुलन से निर्मित हुआ है। जीवन का पूर्वार्ध भारतीय जन मानस के लिए आस्था का चरम रूप है तो वहीं उनके जीवन का उत्तरार्ध समाज, साहित्य, लोक और संस्कृति में सर्वाधिक आलोचना का विषय रहा है। राम के इस जीवन को आधार बना कर भारतीय साहित्य में बहुत लिखा गया है और उसमें से कुछ तो श्रेष्ठता का पर्याय ही हो गया है। राम कथा का आदि स्रोत वाल्मीकि रामायण है, किन्तु प्रत्येक युग के रचनाकार अपनी नई व्याख्या के साथ अपनी-अपनी राम कथा लेकर उपस्थित होते रहे हैं। साहित्य ने राम के जीवन और चरित्र को कैसे समझा, इसके लिए भवभूति का 'उत्तररामचरितम्', कैफी आजमी की कविता 'दूसरा वनवास', बोधिसत्व की कविता 'शान्ता' और भारत भूषण की कविता 'राम की जल समाधि' को देखा जा सकता है। इन सभी रचनाओं में राम अपने देवत्व के साथ नहीं बल्कि समस्त मानवीय विडम्बनाओं के साथ आते हैं। यही राम लोक के ज्यादा नजदीक हैं। इसी राम को लोक ठीक से जानता और मानता है, इसी राम से आग्रह और शिकायत करता है। कृपा भी इन्हीं से और अपने सवालों के जवाब भी इन्हीं से माँगता है। इसी राम में देवत्व के लक्षण भी हैं और यही राम लांछित भी हैं। समाज और साहित्य में राम के मूल्यांकन की दो दिशाएँ रहीं हैं। पहली दिशा राम के जीवन के पूर्वार्ध से होकर जाती है, जिसमें रावण मारा जाता है और दूसरी दिशा उनके जीवन के उत्तरार्ध से होकर गुजरती है, जिसमें सीता निर्वासन, शान्ता की उपेक्षा और शम्बूक की हत्या है। राम के जीवन का पूर्वार्ध राम का रामत्व है, तो उत्तरार्ध राम का राजत्व। बोधिसत्व की कविता 'शान्ता', कैफी आजमी की कविता 'दूसरा वनवास' और भारत भूषण की कविता 'राम की जल समाधि' राम के इसी उत्तर जीवन को अपना आधार बनाती हैं। किन्तु राम के उत्तर जीवन के आलोचनात्मक पाठ की पृष्ठभूमि के रूप में आठवीं शताब्दी की रचना 'उत्तररामचरितम्' को माना जा सकता है।

राम के इस उत्तर जीवन को प्रभावशाली ढंग से साहित्य का विषय भवभूति ने बनाया। 'उत्तररामचरितम्' में राम के उत्तर जीवन की कथा है। इस 'उत्तर' विशेषण प्रिय समय में इस ग्रंथ का शीर्षक भी खासा रोमांचक है। जैसा कि कथा के साक्ष्य बताते हैं कि यह राम के राज्याभिषेक के बाद सीता निर्वासन और मिलन की कथा है। हम सब जानते हैं कि राम अपने जीवन के पूर्वार्द्ध में अपने 'रामत्व' के लिए संघर्ष करते हैं और उत्तरार्द्ध में उसी रामत्व को खोते रहते हैं। एक ही जीवन में एक 'चिरागी व्यक्ति' को अर्जित करने और फिर उसी चिराग के नीचे से उपजे अंधेरे में घिरते चले जाने का नाम 'राम' है। रामायण की मूल कथा दुखान्त है, पर भवभूति ने इसे सुखान्त कर दिया है। आरम्भ से अन्त तक इस ग्रंथ में सीता निर्वासन और शम्बूक वध की अनुगूँज व्याप्त है। ये दोनों प्रसंग रामत्व के समक्ष एक बड़ी चुनौती हैं। भवभूति आरम्भ में ही सीता निर्वासन का संकेत देते हुए कहते हैं कि -

सर्वथा व्यवहर्तव्यं, कुतो ह्यवचनीयता ।

यथा स्त्रीणां तथा वाचां सम्धुत्वे दुर्जनो जनः ।।¹

अर्थात् 'हमेशा सर्वात्मना व्यवहार करते रहना चाहिए, दोषहीन होने की सम्भावना कैसे की जा सकती है? क्योंकि दुर्जन जैसे स्त्रियों के चरित्र के विषय में शंका करता है, वैसे ही निर्दोष जनों के विषय में भी दोष निकालने का प्रयत्न करता है।' यहाँ भवभूति सीता निर्वासन का संकेत तो देते ही हैं, साथ ही सीता के निन्दकों को दुर्जन कहकर अपना पक्ष स्पष्ट कर देते हैं। उधर नये राज्य के नये राजा राम अपने गुरु वसिष्ठ को आश्वस्त करते हैं कि "लोक की आराधना के लिए मुझे स्नेह, दया, दुःख, (यहाँ तक कि) जानकी को भी छोड़ते हुए कोई व्यथा नहीं होगी।"²

यह राजा राम का कथन है। जानकी को त्याग देने का संकल्प लेने वाले राम एक अन्य प्रसंग में कहते हैं कि "यह मेरे घर में लक्ष्मी है, आँखों के लिए अमृत की सलाई है, इसका यह स्पर्श शरीर में गाढ़े-गाढ़े चन्दन का लेप है और बाँहों की यह लता शीतल मोतियों के हार के समान है। और क्या कहूँ, इसकी कौन सी वस्तु प्रिय नहीं है? परन्तु इसका विरह सर्वथा असह्य है।"³ यहाँ राम स्वयं ही अपनी सीमा और सामर्थ्य का मूल्यांकन करते हैं। वे राम हैं, इस धरा धाम की हर चीज को वे बर्दाश्त कर सकते हैं। पर सीता का विरह उनके लिए असह्य है। किन्तु उन्हें बार बार सीता के ही विरह को बर्दाश्त करना पड़ता है। राम का पूरा जीना बर्दाश्त और विरह की ही ट्रेजेडी है। एक तरफ लोक आराधना के लिए सीता को भी त्याग देने का राजा राम का संकल्प है और दूसरी तरफ सीता के असाध्य प्रेमी राम का सीता विरह से सशक्त मन। राजा राम और पति राम के कथन में द्वन्द्व है। इसी द्वन्द्व ने एक ऐसे जीवन का निर्माण किया है, जिसमें सभी दुःख पाते हैं। राजा राम का लक्ष्य जनता और प्रजा का सुख है। यही राम का 'सार्वजनिक' है। राजा राम 'सार्वजनिक' से बँधे हैं और उसी 'बँधाव' में राम का 'निज' छूट जाता है। यह 'सार्वजनिक' और 'निजी' का भी द्वन्द्व है। इस द्वन्द्व में सार्वजनिक मुखर है, किन्तु अनुगूँज निज की गहरी है। राम जीते हैं 'सार्वजनिक' के लिए पर बचे रहते हैं 'निज' की थाती पर। यह एक ऐसा द्वन्द्व है जिसमें राजा राम ने अपने सारे निर्णय 'राम' के विरुद्ध लिये हैं।

अवध में सीता के बारे में फैले अपवाद के कारण राम सीता को वन में छोड़ आने का आदेश देते हैं। इस आदेश में राम का आत्मव्यंग्य देखने लायक है। राम कहते हैं कि 'एष नूतनो राजा रामः समाज्ञापयति', अर्थात् यह 'नया राजा' राम आदेश देता है। भवभूति का 'नूतनो राजा रामः' प्रयोग बहुत ही व्यञ्जना-प्रधान है। नया-नया पद प्राप्त करने वाला राजा राम कुछ भी कर सकता है - यहाँ तक कि सीता का परित्याग भी। भवभूति यहाँ 'नूतन' शब्द का प्रयोग 'राजा राम' के लिए करते हैं। 'राम की शक्तिपूजा' में निराला राम के लिए 'नवीन' विशेषण लाते हैं- 'होगी जय, होगी जय, हे पुरुषोत्तम नवीन'। सीता निर्वासन का आदेश देने वाले राम सिर्फ राजा राम हैं, 'नूतनो राजा रामः', किन्तु सीता की मुक्ति के लिए संघर्ष करने वाले राम 'पुरुषोत्तम नवीन' हैं। राम के इस नूतन राजत्व में सामंती पवित्रता है, तो वहीं 'पुरुषोत्तम नवीन' में नितान्त मानवीय सन्दर्भ हैं। भवभूति के आठवीं शताब्दी के नूतन राजा राम बीसवीं शताब्दी में निराला के यहाँ पुरुषोत्तम नवीन में तब्दील हो जाते हैं। निराला का समय स्वाधीनता आन्दोलन का समय है, बेहतर राष्ट्र/राज्य के लिए निराला बेहतर मनुष्य की तलाश करते हैं। इसलिए निराला के राम की चरम उपलब्धि पुरुषोत्तम नवीन होने में है। राम की यह नवीनता नवजागरण की चेतना से उपजी है। वैसे भी जब पुरुष के भीतर का 'नूतन' सामंत (राजा) जागता है, तब जन-मन की सीताएँ निर्वासित होती हैं और जब उसके अन्दर का 'नवीन' मनुष्य जागता है, तब तमाम सीताओं को मुक्ति मिलती है।

जहाँ तक भवभूति के राम का व्यक्तित्व है, वह राजा राम और पति राम में बँटा हुआ है। भवभूति के राम के लिए सीता-हीन जीवन की कल्पना भी असहनीय है। राजा राम प्रजा-पालन करते हुए राम के जीवन को

उजाड़ देते हैं। शोक की इस मनःस्थिति में राम अपने सम्पूर्ण जीवन का मूल्यांकन करते हुए कहते हैं कि “दुःखों को अनुभव करने के लिए ही राम का जन्म हुआ है।”⁴ निराला के राम भी ‘राम की शक्ति-पूजा’ में हताशा के चरम क्षणों में कहते हैं - “धिक जीवन जो पाता ही आया विरोध, धिक् साधन जिसके लिए सदा ही किया शोध।”⁵ ‘राम की शक्ति पूजा’ के राम को सीता को नहीं पाने की हताशा है, तो ‘उत्तररामचरितम्’ के राम को सीता को खोने का दर्द है। इन दोनों प्रसंगों में आश्रय राम हैं और आलम्बन सीता हैं। ‘उत्तररामचरितम्’ में राम अपने कृत्य के लिए खुद को कृतघ्न, क्रूर आदि कहते हुए सीता से क्षमा माँगते हैं। सोयी हुई सीता के पैरों पर सिर रख कर रोते हुए कहते हैं कि - ‘राम के सिर में तुम्हारे चरण-कमलों का यह आखिरी स्पर्श है।’ (अयं पश्चिमस्ते रामशिरसि पादपंकज स्पर्शः) राम अपने शोक के नितान्त निजी अंधेरे में पृथ्वी से प्रार्थना करते हैं ‘हे वसुन्धरा! तुम अपनी इस परमप्रिय पुत्री का ध्यान रखना।’ सीता के रक्षार्थ पृथ्वी से प्रार्थना करना भी काफी अर्थपूर्ण है। आखिर पुरुषसत्तात्मक समाज द्वारा लांछित स्त्री की आखिरी पनाहगाह पृथ्वी (स्त्री) ही हो सकती है। सीता के पैरों पर अपना सिर रखकर अपना अपराध स्वीकार करते राम ‘आधुनिक’ राम हैं। यहाँ प्रश्न यह है कि अपराध कौन स्वीकार करता है ‘राजा’ या ‘पति’? इसका जवाब चाहे जो हो, युग चाहें जो हो, पर इतना तो तय है कि अपना अपराध स्वीकारे बिना किसी राम को फिर से उसकी सीता नहीं मिल सकती।

अयोध्या में यदि कुछ बचा है, तो सिर्फ राजा राम। यही राजा राम शम्बूक नामक शूद्र को तपस्या करने से रोकते हैं। शूद्र का तपस्या करना धर्म-विरुद्ध है। ऐसे में राजा राम का कर्तव्य बनता है कि वह शूद्र तपस्वी को रोकें। इस प्रसंग में भी राम के राजत्व से उनका रामत्व टकराता है। किन्तु राजा राम से कोई जीत नहीं सकता, फलतः रामत्व हार जाता है। शम्बूक को मारने के लिए राम तैयार नहीं हैं, किन्तु राजा को तो धर्म की व्यवस्था निश्चित करनी ही होगी। इसलिए राम अपने दाहिने हाथ को सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि “अरे दक्षिण हस्त! तू मरे हुए ब्राह्मण को जिलाने के लिए शूद्र मुनि पर तलवार का प्रहार कर। अरे तू तो आसन्नप्रसवा प्रियतमा सीता का परित्याग करने में कुशल राम का हाथ है; अतः तुझमें करुणा कहाँ से आयी? निर्दय व्यक्ति का अंग होने के कारण तू भी करुणाहीन होकर शूद्र तापस पर प्रहार करें।”⁶ यहाँ राजा राम के कृत्य से राम आत्मग्लानि से भर उठते हैं। वे अपने दाहिने हाथ को ‘रे’ कहते हैं। ‘रे’ में एक प्रकार का धिक्कार का भाव है। शम्बूक को मारने के लिए ‘दाहिने हाथ’ को निर्देशित करने के पीछे भवभूति का विलक्षण रचना-मानस है। दाहिना हाथ सीता को निर्वासित करने जैसा जघन्य कार्य कर चुका है। इसलिए उसे इस तरह के कार्यों में कुशलता हासिल है। दूसरे यह कि शास्त्रों में वाम भाग पत्नी का माना जाता है। परन्तु राम ने तो निर्दोष पत्नी सीता का परित्याग कर दिया है, अतः जिसे त्याग चुके हों, उसे निर्देशित करने का अधिकार भी खो चुके हैं। इसलिए भी वे दाहिने हाथ को आदेश देते हैं। भवभूति की यह युक्ति जैसे दक्षिण पक्ष और वाम पक्ष की समीक्षा है। धुमिल भी तो कहते हैं, “दायां हाथ नैतिकता के बन्धन में कुछ इस कदर बंधा है.....”। यह वही तथाकथित नैतिकता है, जिसमें शम्बूक मारा जाता है। “वाम पक्ष” शम्बूक की हत्या में शामिल नहीं है। शम्बूक को मारने में राम का संशय भवभूति का संशय है और भवभूति का संशय उनके समय का संशय है। वाल्मीकि रामायण में शम्बूक को मारने में न राम हिचकते हैं और न उसके वर्णन में बाल्मीकि। यह समय का ही दवाब है जो रचना और रचना-मानस दोनों को प्रभावित कर देता है। वाल्मीकि के राम को शम्बूक को मारने में कोई संशय नहीं है। उनके लिए शम्बूक की हत्या एक धर्मोचित कर्म है। राजधर्म बहुत आसानी से किसी भी नागरिक की हत्या को वध में बदल देता है, वाल्मीकि के राम भी यही करते हैं। आधुनिक शब्दावली में कहें, तो देश धर्म के नाम पर वह एक तरह से “फर्जी एनकाउन्टर” था। समय के बदलने के साथ सामाजिक चेतना में परिवर्तन आना तय है और यही परिवर्तित चेतना किसी घटना को ‘डिकोड’ करने के औजारों को बदल देती है।

राम की बहन के जीवन को आधार बनाकर लिखी गयी बोधिसत्त्व की कविता 'शान्ता' राम के उसी उत्तर जीवन का मूल्यांकन करती है। यह कविता शान्ता की अनकही कथा को अपना कथ्य बनाती है-

“दशरथ की एक बेटी थी शान्ता

लोग बताते हैं

जब वह पैदा हुई

अयोध्या में अकाल पड़ा

बारह वर्षों तक.....

धरती धूल हो गयी.....।”⁷

इस तरह शुरू हुई यह कविता शान्ता के जीवन की नियति को स्पष्ट कर देती है। शान्ता रामकथा के उन गुमनाम पात्रों में से है, जिनके बारे में साहित्य खामोश है। शान्ता लड़की थी और ऐसी मान्यता है कि लड़की के जन्म लेते ही अयोध्या में अकाल पड़ गया था। लड़की और अकाल का यह सम्बन्ध पुरुषसत्तात्मक समाज व्यवस्था का निचोड़ है।

एक बेहतर राज-व्यवस्था के लिए अकाल को तुरन्त खत्म करने की चिन्ता दशरथ को हुई। निवारण के रूप में शान्ता को शृंग ऋषि को दान में दे दिया गया। उसके बाद फिर कभी शान्ता अयोध्या नहीं आयी। उसी शान्ता के पति ने दशरथ के लिए पुत्रेष्टि यज्ञ कराया और अयोध्या का आंगन चार पुत्रों से भर गया। कवि कहता है कि-‘सन्तति का अकाल मिट गया’। इस तरह शान्ता अकाल का अशुभ कारण और राम आदि भाई अकाल खत्म होने के शुभ फल थे। और फिर कभी अयोध्या के उस अकाल के कारण और फल कभी मिल नहीं पाये। उधर....

“शान्ता राह देखती रही

अपने भाइयों की

पर कोई नहीं गया उसे आनने

हाल जानने कभी।”⁸

यों तो शान्ता को अपने सभी भाइयों का इन्तजार था, पर सबसे अधिक एतबार राम पर रहा होगा। राम पर यह एतबार शान्ता को ही नहीं, कवि को भी है। पर शान्ता को पिता, भाई सभी ने छोड़ दिया। फिर कभी कोई उससे नहीं मिला -

“मर्यादा पुरुषोत्तम भी नहीं,

शायद वे भी रामराज्य में अकाल

पड़ने से डरते थे। जबकि वन जाते

समय

राम, शान्ता के आश्रम से होकर

गुजरे थे.....। पर मिलने नहीं गए।”⁹

शान्ता के दुःख को मर्यादा पुरुषोत्तम भी नहीं समझ सके। बोधिसत्त्व जब यह लिखते हैं कि ‘शायद वे भी रामराज्य में अकाल पड़ने से डरते थे’, तो वे रामराज्य की समीक्षा करते हैं। उस रामराज्य की, जो राम के महान व्यक्तित्व से निर्मित हुआ था। राम को कभी शान्ता का ख्याल तक नहीं आता है, पर शान्ता उन्हें कभी भुला नहीं पायी -

“शान्ता जब तक रही

राह देखती रही भाइयों की

आएँगे राम-लखन

आएँगे भरत-शत्रुघ्न।¹⁰

यह पूरी कविता शान्ता के जीवन की त्रासदी को तो उभारती ही है, साथ ही राम की समस्त नैतिकता, मनुष्यता और रामत्व पर कई सवाल खड़े करती है। राम राजा हैं। रामराज्य उनकी महत्तम व्यवस्था है। पर राम स्वयं भी शान्ता के प्रति उसी पुरुष ग्रंथि से सोचते हैं, जिसमें एक स्त्री उपेक्षिता का जीवन गुजारने के लिए मजबूर है। राम भी एक राजा की तरह ही सोचते हैं। उसी सोच में शान्ता का पीहर छूट जाता है, हमेशा हमेशा के लिए।

राम के रामत्व का एक दूसरा पहलू 'दूसरा वनवास' (कैफी आजमी) कविता प्रस्तुत करती है। इस कविता की पृष्ठभूमि में छह दिसम्बर उन्नीस सौ बानबे का बाबरी मस्जिद विध्वंस है। कैफी लिखते हैं कि -

“राम बनवास से जब लौटकर घर आये,
याद जंगल बहुत आया जो नगर में आये,
रक्से-दीवानगी आंगन में जो देखा होगा
छह दिसम्बर को श्रीराम ने सोचा होगा
इतने दीवाने कहाँ से मेरे घर आये”¹¹

राम को नगर में आकर नगर के हालात देखकर जंगल की याद आती है। यह एक तरह से नगर की सभ्यता-समीक्षा है। आम तौर पर नगर को एक सभ्य इकाई माना जाता है और जंगल को एक अव्यवस्थित परिवेश। पर नगर का उन्माद देखकर राम को जंगल की याद आती है। राम तथाकथित कारसेवकों को देख कर सोचते हैं कि 'इतने दीवाने कहाँ से मेरे घर आये', यह दीवानापन धार्मिक जड़ता का है, साम्प्रदायिकता का है। यह राम के नाम पर होने वाली राजनीति का दीवानापन है। इसमें स्वयं राम भी घायल होते हैं -

“शाकाहारी हैं मेरे दोस्त, तुम्हारे खंजर
तुमने बाबर की तरफ फेंके थे सारे पत्थर
है मेरे सर की ख़ता, ज़ख़्म जो सर में आये”¹²

लेकिन राम यहाँ भी मजबूर हैं। उनके भक्तों के उन्माद में पूरी सरयू लहलुहान है। राम उस सरयू में अपने पाँव भी नहीं धो पाते हैं -

“पाँव धोये बिना सरयू के किनारे से उठे
राम ये कहते हुए अपने दुआरे से उठे
राजधानी की फ़ज़ा आई नहीं रास मुझे
छह दिसम्बर को मिला दूसरा बनवास मुझे”¹³

राम के पहले वनवास के पीछे उनके निन्दक थे, तो दूसरे वनवास के पीछे उनके तथाकथित भक्त। पहले वनवास की एक निश्चित अवधि थी, पर इस दूसरे वनवास की कोई अवधि नहीं है। पहली बार तो राम पिता का वचन निभाने गये थे, पर दूसरी बार उनके भक्तों ने उन्हें वनवास दिया था। दूसरे यह कि राम के इस दूसरे वनवास के साथ ही अयोध्या राम-विहीन हो जाती है। अब राम विहीन अयोध्या में राम मन्दिर बने या न बने, उसमें रहने के लिए राम मौजूद नहीं रहेंगे। छह दिसम्बर के बाद से राम को राजधानी की फ़ज़ा रास नहीं आती है; क्योंकि राजधानियों में प्रपंच बहुत बढ़ गया है। भवभूति के राम भी सीता के वियोग और दुःख में वन में जाकर रोते हैं, क्योंकि अयोध्या राजधानी है और राजधानियों में रोने की जगहें नहीं होतीं, सिर्फ़ रुलाने के कारण होते हैं। कैफी आजमी की यह कविता भक्ति और राजनीति के घालमेल से उपजी राम की विडम्बना की

कविता है; जो राम के चरित का उत्तर पाठ प्रस्तुत करती है। साथ ही राम को देखने-समझने की एक नयी दृष्टि भी देती है।

राम के उत्तर जीवन को आधार बनाकर भारत भूषण ने 'राम की जल समाधि' कविता लिखी है। यह कविता राम के देवत्व को दरकिनार कर उनको मनुष्य राम के तौर पर प्रस्तुत करती है। ऐसे राम जिनका दुःख-सुख, जिनकी हार-जीत और जिनका प्रेम सब कुछ मानवीय है। यह कविता जल समाधि लेते समय राम की मनःस्थिति की विलक्षण अभिव्यक्ति है। राम का सारा जीवन सीता की उपस्थिति और अनुपस्थिति के इर्द गिर्द निर्मित हुआ है। अपने अन्त समय में भी राम सीता के इस एहसास से मुक्त नहीं हो पाते -

“पश्चिम में ढलका सूर्य उठा वंशज सरयू की रेती से,
हारा-हारा, रीता-रीता, निःशब्द धरा, निःशब्द व्योम,
निःशब्द अधर पर रोम-रोम था टेर रहा सीता-सीता।”¹⁴

राम अपने जीवन के अन्तिम क्षणों में अपने अकारथ होने को शिद्दत से महसूस करते हैं -

“किसलिए रहे अब ये शरीर, ये अनाथमन किसलिए रहे,
धरती को मैं किसलिए सहूँ, धरती मुझको किसलिए सहे।”¹⁵

राम जीवन भर सीता को ही खोजते रहे और अपनी समाधि के समय भी यही कर रहे हैं -

“तू कहाँ खो गयी वैदेही, वैदेही तू खो गई कहाँ,
.....

देवत्व हुआ लो पूर्णकाम, नीली माटी निष्काम हुई,
इस स्नेहहीन देह के लिए, अब सांस-सांस संग्राम हुई।”¹⁶

ये आधुनिक राम हैं। जल समाधि लेने के लिए प्रस्तुत राम को सीता के स्नेह के आगे सब कुछ व्यर्थ लगता है। वे सरयू तट पर खड़े होकर अपने राजत्व का मूल्यांकन करते हैं -

“ये राजमुकुट, ये सिंहासन, ये दिग्विजयी वैभव अपार,
ये प्रियाहीन जीवन मेरा, सामने नदी की अगम धार,
माँग रे भिखारी, लोक माँग, कुछ और माँग अंतिम बेला,
.....

आदर्शों के जल महल बना, फिर राम मिलें न मिलें तुझको,
फिर ऐसी शाम ढले न ढले।”¹⁷

यहाँ अपने अन्तिम समय में भी लोक को और भी कुछ माँगने को कहते हैं। 'लोक माँग, कुछ और माँग' में विडम्बना और उल्लाहना दोनों हैं। यह वही लोक है, जो राम से उनकी सीता माँग चुका है। इसलिए राम कहते हैं कि कुछ और माँग। यह राम भी जानते हैं और शायद वह लोक भी कि अब सीता-हीन राम के पास देने के लिए और कुछ नहीं है। लोक के प्रति यही शिकायत 'उत्तररामचरितम्' के राम को भी है। वासन्ती जब राम से सीता को निर्वासित करने का कारण पूछती है, तो राम कहते हैं कि 'लोको न मृष्यतीति'। अर्थात् लोक सहन नहीं करता था, (इसलिए)। सीता के प्रति किए गये अपराध के लिए राम जिस लोक को दोषी ठहराते हैं, वही लोक कालान्तर में राम को भी माफ़ नहीं करता। आज भी लोक में 'बेटी न ब्याहब अजोधा में' उक्ति प्रसिद्ध है। यह राम की वर्चस्वशाली सत्ता का 'काउण्टर डिस्कोर्स' है। समृद्धि चाह साकेत-सी हो, वर चाह राम-सा हो, पर लोक अपनी बेटियों को सीता की नियति में वापस नहीं डालना चाहता। भोजपुरी भाषा के श्रेष्ठ कवि चन्द्रशेखर मिश्र अपने 'सीता' महाकाव्य में राम के इसी रामत्व पर सवाल खड़ा करते हुए कहते हैं कि -

“कइसे ई लोक उनके याद करी,
जहाँ रामहि लोक के लीक मिटवलें ।
ऊ वने गइलें त ई वने गइली,
ई वने गइली त ऊ वने ना गइलें ।
राम ही रमता चूक गयी,
सीय की सियता एक धार खड़ी है ।
वे बड़े बाप के बेटे बड़े नहीं,
वो बड़े बाप की बेटी बड़ी है ।”¹⁸

यह लोक की कसौटी है, इससे कोई नहीं बचता । राम भी नहीं । जल-समाधि लेते हुए राम जैसे-जैसे सरयू में उतरते हैं, वैसे-वैसे सीता की स्मृतियों से घिरते जाते हैं । सरयू में पाँव पड़ते हैं, तब राम की आँखों में सीता मिलन का प्रथम प्रसंग कौंध जाता है-

“फिर लहरों पर वाटिका खिली, रतिमुख सखियाँ, नतमुख सीता”¹⁹

पानी घुटनों तक आता है और साथ ही आती है सीता की याद भी -

“फिर एक हिरन सी किरन देह, दौड़ती चली आगे आगे”²⁰

और जब पानी छाती तक आता है, तब राम को अग्नि परीक्षा देती हुई सीता की याद आती है-

“फिर एक तपस्विनी शांत सौम्य,
धक धक लपटों में निर्विकार, सशरीर सत्य सी सम्मुख थी,”²¹

अपने जीवन के कठिनतम क्षणों में प्रिय की याद एक स्वाभाविक मानवीय पक्ष है । ‘राम की शक्ति पूजा’ में भी राम को हताशा के चरम क्षणों में जनक वाटिका की ही याद आती है -

“ऐसे क्षण अन्धकार घन में जैसे विद्युत्
जागी पृथ्वी-तनया-कुमारिका-छवि, अच्युत
देखते हुए निष्पलक, याद आया उपवन
विदेह का प्रथम स्नेह का लतान्तराल मिलन”²²

अपने जीवन के सबसे संकटग्रस्त समय में जीवन की कोमलतम अनुभूतियों को याद करना मनुष्यगत स्वभाव है । राम भी यही करते हैं । राम अपने जीवन में सीता की रक्षा भले न कर पाये हों, पर सीता की हर स्मृति की रक्षा आँखों की कोर की तरह करते हैं । सरयू और कुछ नहीं, सीता की स्मृति ही है और जैसे राम सरयू में नहीं, सीता की स्मृति में समाधि लेते हैं -

“आगे लहरें बाहर लहरें, आगे जल था, पीछे जल था,
केवल जल था, वक्षस्थल था, वक्ष स्थल तक केवल जल था ।
जल पर तिरता था नील कमल, बिखरा बिखरा सा नील कमल,
कुछ और-और सा नील कमल”²³

यही राम उत्तर राम हैं । मनुष्य राम । स्वाभाविक राम । भारत भूषण ने ‘बिखरा बिखरा सा नील कमल, कुछ और-और सा नील कमल,’ के रूपक में ‘मनुष्य राम’ होने के अर्थ का पूर्णरूपेण दोहन किया है । समाज, संस्कृति, धर्म और राज्य को समेटते-समेटते बिखर गया है ‘नीलकमल’ । इसी बिखराव में अन्ततः राम अपना सब कुछ सरयू को सौंप देते हैं -

“सर्वस्व सौंपता शीश झुका, लो शून्य राम लो राम लहर,
फिर लहर लहर, सरयू सरयू, लहरें लहरें, लहरें लहरें,
केवल तम ही तम, तम ही तम, जल, जल ही जल केवल”²⁴

यही राम जिनका सुख दुःख सभी कुछ मनुष्यों जैसा है; यही राम लोक के राम हैं। मानव राम हैं। धर्माचार्यों, प्रवचनकारियों, राजनीतिज्ञों के राम तो चमत्कारिक राम हैं, अतिमानव हैं। राजा राम हैं; जिनका जन्म अयोध्या में हुआ है। जिनके तथाकथित भक्त मन्दिर बनाने की राजनीति में शामिल हैं। पर वे राम जो लोक के मन में रहते हैं, और जो सीता के स्नेह सागर में डूब चुके हैं, उस राम पर हमारा साहित्य खुले मन से बात करता है। ये कविताएं इस बात की तस्दीक करती हैं।

‘उत्तररामचरितम्’ से लेकर ‘राम की जल-समाधि’ तक का राम का यह उत्तर प्रसंग अपने समय और समाज के दबावों तथा ओजारों के बीच विकसित हुआ है, जो साहित्य के निर्भय लोकतांत्रिक चरित्र का बेजोड़ तथा महत्त्वपूर्ण उदाहरण है।

हिन्दी विभाग

डॉक्टर हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय,
सागर (म.प्र.)

सन्दर्भ -

1. भवभूति, उत्तररामचरितम्, श्लोक - 05, पहला अंक,
2. “स्नेहं, दयां च, सौख्यं च यदि वा जानकीमपि।
आराधनाय लोकस्य मुच्यते नास्ति मे व्यथा।।” भवभूति, उत्तररामचरितम्, श्लोक 12, अंक पहला।
3. “इयं गेहे लक्ष्मीरियममृतवर्तिनयनयो-
रसावस्थाः स्पर्शो वपुषि बहुलश्चन्दनरसः।
अयं बाहुः कण्ठे शिशिरमसृणो मौक्तिकसरः
किमस्या न प्रेयो? यदि परमसह्यस्तु विरहः।”
भवभूति, उत्तररामचरितम्, श्लोक - 38, अंक पहला।
4. “दुःखसंवेदनायैव, रामे चैतन्यमागतम्।
मर्मोपधातिभिः प्राणैवैज्जकीलायितं हृदी।।”
भवभूति, उत्तररामचरितम्, श्लोक-47, पहला अंक।
5. त्रिपाठी सूर्यकान्त, ‘निराला’, निराला रचनावली, भाग-एक, संपादक-नन्द किशोर नवल, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 337।
6. “रे हस्त ! दक्षिण ! मृतस्य शिशोर्द्विजस्य,
जीवातवे विसृज शूद्रमुनौ कृपाणम्।
रामस्य बाहुरसि, निर्भरर्भखिन् -
सीताविवासनपटो : करुणा कुतस्ते?”
भवभूति, उत्तररामचरितम्, श्लोक - 10, दूसरा अंक।
7. बोधिसत्त्व, शान्ता, कविताकोश डॉट कॉम
8. वही
9. वही
10. वही

11. आजमी कैफी, दूसरा वनवास, कविताकोश डॉट कॉम
12. वही
13. वही
14. भूषण भारत, राम की जल समाधि, कविताकोश डॉट कॉम
15. वही
16. वही
17. वही
18. मिश्र चंद्रशेखर, सीता
19. भूषण भारत, राम की जल समाधि, कविताकोश डॉट कॉम
20. वही
21. वही
22. त्रिपाठी सूर्यकान्त 'निराला', निराला रचनावली, भाग-एक, संपादक-नन्द किशोर नवल, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 330-331
23. भूषण भारत, राम की जल समाधि, कविताकोश डॉट कॉम
24. वही